॥ हर हर महादेव ॥

पुज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

की

संक्षिप्त जीवनी

लेखकः- श्री वेदान्ती स्वामी

पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी
का
संक्षिप्त जीवन चरित

प्रतापगढ जिले में एक छोटा सा ग्राम है—भटनी। वहाँ एक सरयूपारीण ब्राह्मण परिवार रहता है—पं० रामनिधि ओझा का। ओझाजी के पिता किसी समय गोरखपुर जिले के ओझौली ग्राम के निवासी थे, किन्तु कालान्तर में कालाकांकर के राजा उन्हें भटनी ले आये और तभी से यह परिवार यहाँ ही रहने लगा है।

पं० रामनिधि ओझा के तीन पुत्र हुए। इनमें सबसे छोटे हरनारायण थे। इनका जन्म संवत् १९६४ की श्रावण-शुक्ला द्वितीया, रविवार को ईस्वी सन् १९०७ में हुआ था।

ओझा परिवार सनातनधर्म का कट्टर अनुयायी था और पुरातन सभ्यता तथा संस्कृति का बड़ा प्रेमी भी। अतः ओझा जी ने हरनारायण को संस्कृत पढ़ाने का ही निश्चय किया। प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त हुई तो उन्होंने उन्हें घर पर ही प्रथमा के पाठ्यक्रम का अध्यापन प्रारम्भ करा दिया। हरनारायण पढ़ने-लिखने में तेज थे, किन्तु उनकी प्रकृति बचपन से ही कुछ विलक्षण सी थी। वह सांसारिक पदार्थों से सदा ही विरक्त से रहते थे और देर-देर तक एकान्त में बैठे न जाने क्या सोचा करते थे?

इस प्रकार हरनारायण घर में रहते हुए भी वैरागी से ही हो गये थे। इस समय उनकी अवस्था लगभग ९ वर्ष की थी। कभी भी जी में आता तो घर से भाग निकलते। पिता और बड़े भाई खोजते-फिरते। मिल जाने पर घर ले आते, डाँटते और डपटते भी। किन्तु बालक पर

इसका कुछ भी प्रभाव न पड़ता। वह इस प्रकार न जाने कितनी बार घर से भागे और पकड़ कर वापस लाये गये। दिन प्रतिदिन बालक के हृदय में संसार की क्षण-भंगुरता अपना स्थान दृढ़ करती गयी।

विवाह और गृह-त्याग

प्रतापगढ़ के देहातों में बाल-विवाह का चलन था। लड़की वालों का कहना था कि उन्हें उत्तम कुल के लड़के बड़ी कठिनता से मिलते हैं अतः वे ५-५ और ७-७ वर्ष के बालकों को ही घेर लेते थे। हरनारायण ६ वर्ष के हो गये थे, अतः ओझा जी के द्वार पर भी लड़की वालों का आना-जाना प्रारम्भ हो गया।

पिता ने सोचा कि विवाह हो जायगा तो सम्भवतः लड़का घर गृहस्थी में फँस जाय और फिर बार-बार घर से भागना छोड़ दे, अतः उन्होंने उनका विवाह पक्का कर दिया।

घर में बाजे बजे, निकट के ही एक ग्राम खण्डवा में बारात गयी और नन्हे से हरनारायण अपने साथ एक नन्हीं-सी बहू लेकर घर लौट आये। विवाह तो हो गया किन्तु इससे उस वैरागी बालक के हृदय में राग उत्पन्न न हो सका। संसार के प्रति उसकी विरक्ति पहले के जैसी ही बनी रही और एक दिन अवसर मिला तो हरनारायण ने फिर लुटिया डोर सभाली और घर से निकल भागे, किन्तु पिताजी ने फिर जा पकड़ा। 'नहीं पिताजी! अब मैं घर नहीं जाऊंगा। मैं जहाँ जाना चाहता हूं मुझे जाने दीजिए' हरनारायण ने कहा।

किन्तु पिताजी न माने। उन्होंने कहा 'वंश की रक्षा के लिए मैं तेरी एक सन्तान चाहता हूं हरनारायण! उसे देकर तू चले जाना। फिर मैं नहीं रोकूंगा।' बस; पुत्र ने पिता की यह बात मान ली।

अब वह गृहस्थ बन गये और पिता जी की इच्छापूर्ति के दिन की प्रतीक्षा में घर की चहारदीवारी में एक बन्दी के समान जीवन व्यतीत

करने लगे। किन्तु उनकी दैनिकचर्या वही पुरानी ही रही। पूजन भजन तथा सद्ग्रन्थों का पठन-पाठन उसी प्रकार नियमित रूप से चलता रहा।

हरनारायण की अवस्था १७ वर्ष के लगभग थी कि उनके घर भगवती स्वरूपा एक कन्या ने जन्म लिया।

'बस' पिताजी की अभिलाषा पूरी हो गयी हरनारायण ने सोचा—'अब इस घर में मेरा क्या काम ?' उसने फिर चलने की ठानी।—पिता सामने खड़े थे।

—'बस' अब मत रोकना पिताजी !' हरनारायण ने कहा—'अब यह घर मुझे फाड़ खाने के लिए दौड़ा आता है। मैं कब का बन्दी सा पड़ा हूं घर के इस बन्दीखाने से अब तो मुझे मुक्त ही कर दीजिए।'

पिता के पीछे ही माँ खड़ी थी और उनके पीछे नवजात बालिका को गोद लिए पत्नी। पिता निरुत्तर हो गये किन्तु अब माता सामने थी। 'तुम मेरे धर्म मार्ग में बाधक मत बनो माँ !' हरनारायण ने कहा—'अपने आँसुओं को रोक लो, मुझे जाने दो।'

किन्तु तेरे बिना मैं जीवित कैसे रह सकूंगी हरनारायण ! माँ ने रोते हुए कहा ! 'जैसे आचार्य शंकर की माँ रह गई थीं, मेरी माँ !' हरनारायण ने उत्तर दिया और जब वह आगे बढ़ा तो बालिका को हाथों में लिए पत्नी बिलख उठी—'और मुझे कहाँ छोड़े जाते हो नाथ !' उसने कहा। 'इन माता पिता के चरणों में' हरनारायण ने उत्तर दिया—'यह तेरे भी माता पिता ही हैं, इनकी सेवा करना।'

सारे परिवार को रोता छोड़कर युवक घर से चल दिया, कभी भी फिर उस घर के स्वामी के रूप में वापस न लौटने के लिए। माता-पिता का स्नेह भूलकर, पत्नी का मोह त्याग कर और नन्हीं-सी

कोमल बाधिका के आकर्षण को तिनके के समान तोड़कर वे चले गये। भला जगत पिता स्वयं जिसे अपने गोद में उठाने के लिए अपने अनन्त हाथ पसारे खड़े हों वह किसके रोके रुक सकता था ?

अध्ययन

बन्धनों से मुक्त नवयुवक बढ़ा जा रहा था। इसका निश्चय तो वह स्वयं भी नहीं कर पाया था कि सहसा ही उसने अपने को प्रयाग के समीप कुरेश्वर ग्राम में एक विशाल वट वृक्ष की छाया में बैठे एक टाट कोपीनधारी ध्यानमग्न महात्मा के सम्मुख खड़े पाया। यह महात्मा थे श्रीस्वामी ब्रह्मानन्दसरस्वती जो आगे चलकर ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य हुए।

'तुम नरवर जाकर अभी अध्ययन करो।' स्वामी जी ने आँखें खोलते हुए कहा। 'तुम पर माँ सरस्वती की विशेष कृपा रहेगी।' और युवक हरनारायण पुण्यतोया गंगा के किनारे-किनारे आगे बढ़ा।

अब वे नरवर में थे, पूर्वकालीन गुरुकुलों के जैसे सांगवेद विद्यालय के स्वच्छ वातावरण में जहाँ तपोमूर्ति नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री जीवनदत्त जी महाराज की अध्यक्षता में देववाणी संस्कृत की प्राचीन गुरु-शिष्य परम्परा के अनुसार अध्यापन का कार्य चल रहा था। यहीं पर उन दिनों पण्डित स्वामी श्री विश्वेश्वराश्रमजी महाराज भी विराजमान थे जो षड्दर्शनाचार्य थे। हरनारायण ने उन्हें ही अपना गुरु वरण किया। उनसे उन्होंने प्रथम ११ महीने तक व्याकरण शास्त्र पढ़ा और तदुपरान्त १३ महीने तक दर्शनशास्त्र का अध्ययन किया।

स्वामी अच्युतमुनि जी के अनुरोध पर स्वामी विश्वेश्वराश्रम जी नरवर को त्यागकर वहाँ से ७ कोस की दूरी पर 'भृगु क्षेत्र' में आये तो हरनारायण भी उनके साथ ही वहाँ चले आये।

अब वह अध्ययन के साथ ही साथ भागवत का प्रचलन भी करने लगे थे। अब उनका नाम था 'हरिहर चेतन (चैतन्य)।'

परमहंस

हरिहर चेतन बचपन में वैरागी से थे ही किन्तु विद्याध्ययन के दिनों में भी उनकी वृत्ति जैसी की तैसी ही बनी रही। फिर उन्हें तप की ओर आकर्षण हुआ और पढ़ना बन्दकर घोर जंगल में उत्तराखण्ड की हिम से आच्छादित हिमालय की तलहटियों में तरुण तपस्वी हरिहर चेतन अपनी साधना में लीन हुए। अपने देह की ममता त्याग कर तथा अपनी भूख और प्यास को हनन कर रहे थे। तीन वर्ष की कठोर साधना के पश्चात् उनकी तपस्या सफल हुई, उन्हें आत्मा का दर्शन हुआ, वे परमहंस अवस्था प्राप्त कर गये।

करपात्री

हरिहर चेतन अब एक परमहंस के रूप में आश्रम में लौटे तो उनके मुख पर अलौकिक आभा थी। प्रसन्नता तो मानो उनके रोम-रोम से फूट पड़ रही थी।

साथियों ने देखा तो गदगद हो उठे। उन्होंने खुले हृदय से उनका स्वागत किया। युवक वैरागी ने सबसे पहले आगे बढ़कर गुरुदेव की पूजा की और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। हरिहर चेतन अपनी साधना के उच्चतम शिखर पर पहुंच चुके थे। अब वह केवल एक कोपीन धारण करते थे। शौच जाने के लिए केवल हांड़ी पास में रखते थे। पवित्र, सदाचारी ब्राह्मणों के घर भिक्षा मांगते और हाथ पर रखकर ही भोजन करते। फिर भी भोजन के सम्बन्ध में भी वह बड़े कठोर नियमों का पालन करते। हर किसी कूप का तो जल भी ग्रहण नहीं करते थे। करों में ही भोजन करने के कारण उन्हें सभी लोग 'करपात्री' कहने लगे थे।

करपात्री जी एक बार नरवर से प्रयाग आये तो वहाँ उन्होंने फिर स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती के दर्शन किए और उनके त्यागमय जीवन से वह प्रभावित हुए।

स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने भी इनकी विद्वत्ता को आंका किन्तु साथ ही उन्होंने यह भी अनुभव किया कि आश्रम धर्म के अनुसार अब इन्हें दण्डग्रहण करना चाहिए। अतः उन्होंने करपात्री जी को दण्ड-ग्रहण करने के लिए कहा। स्वामी विश्वेश्वराश्रम जी ने भी जोर दिया।

शास्त्रार्थ का अवसर

हरिद्वार के अर्धकुम्भी का अवसर था। देश के दूर-दूर भागों से, कोने-कोने से लोग श्री भगवती भागीरथी के पुण्य स्नानार्थ और महात्माओं के दर्शनार्थ वहाँ पधारे थे। श्री पं० मदनमोहन मालवीय, महाराज जी वहाँ पर पहुँचे थे। एक दिन श्री मालवीय जी महाराज अपने स्थान से कहीं जाने के लिए निकले तो उन्हें मार्ग में ही सेठ गौरीशंकर गोयनका मिले। श्री मालवीय जी के पूछने पर उन्होंने बताया कि यहीं कोयलघाटी में एक महात्मा हैं, उनका दर्शन करके आ रहा हूं। फिर क्या था दूसरे दिन श्री मालवीय जी महाराज महात्मा जी के दर्शन करने पहुँच गये और श्रीमद्भागवत विषयक विचार विनिमय के बाद मालवीय जी कहने लगे कि यहाँ भक्ति, ज्ञान और वैराग्य की त्रिवेणी बह रही है। इसके अवगाहन से प्राणी पाप, ताप और दैन्य सबसे छुटकारा पा जाता है। हम लोगों के सौभाग्य से अभी ऐसे ज्ञानी महात्मा विद्यमान हैं जहाँ प्रत्येक प्रकार का विचार जिज्ञासु प्राणी प्राप्त कर सकते हैं। वेदों और शास्त्रों के गूढ़तत्त्व, जो पुराणों में बिखरे पड़े हैं, इन महात्माओं की कृपा से हम सब लोगों को वह प्राप्त होते हैं।

फिर उन्होंने महात्मा जी को सम्बोधित करते हुए कहा कि— 'महाराज इन्हीं पुराणों के बल पर मैं अन्त्यजों को भी प्रणव युक्त मन्त्र की दीक्षा देता हूं।' महात्मा जी ने कहा कि 'मालवीय जी मैं तो कोई भी विषय उपक्षिप्त नहीं करना चाहता था, परन्तु आपने ही अन्त्यजों के लिए प्रणवयुक्त मन्त्रों के उपदेश का विषय उपक्षिप्त कर दिया; यह शास्त्र विरुद्ध है।' मालवीय जी ने कहा कि 'फिर तो महाराज विचार हो जाय', और महात्मा जी ने भी हामी भरी तथा अगला दिन विचार विनिमय के लिए रखा गया। मालवीय जी जैसा प्रखर वक्ता वह भी वकील अर्थात् वकालती जिरह में बाल की खाल निकालने वाला व्यक्ति उसके साथ एक लघुकाय तथा अल्पवयस्क जिसके रेख भी नहीं आयी हैं, वह परम तेजस्वी संन्यासी। शास्त्रार्थ का हल्ला जोरदार फैल गया है। प्रातः पुनः गौरीशंकर गोयनका पहुँचे तो महात्मा जी को एक पुस्तक खोलकर कुछ लिखते देखा। प्रणाम कर पूछा कि 'महाराज क्या नोट कर रहे हैं ?'

महात्मा जी ने कहा कि 'भाई, तुमने ऐसा व्यक्ति मेरे पीछे लगा दिया जो अन्त्यजों के लिए प्रणवयुक्त मन्त्र की दीक्षा देने का समर्थन शास्त्रों से कर रहा है। आज मध्याह्न में विचार विनिमय है। उसी के लिये कुछ वचन एकत्र कर रहा हूं।' अस्तु। सायंकाल शास्त्रार्थ का हल्ला सुनकर शास्त्रार्थ के स्थल पर हरिद्वार, ऋषिकेश के दूर दूर से आये हुए लोग पहुँच गये। श्री गौरीशंकर गोयनका, श्री जयदयाल गोयनका, ब्रह्मचारी गंगास्वरूप जी तथा अनेक महात्मा और सदस्य पहुँचे थे। समय मे मालवीय जी महाराज भी पहुँचे और पहुँचते ही उन्होंने व्याख्यान देना प्रारम्भ किया। उनके व्याख्यान में ही उस दिन का सारा समय समाप्त हो गया, सभा विसर्जित हुई, और ब्रह्मचारी गंगास्वरूप ने दूसरे दिन शास्त्रार्थ के लिए घोषणा की।

दूसरे दिन भी शास्त्रार्थ के लिए वैसा ही जमघट रहा। मालवीय जी भी समय से पहुँचे और पहले दिन के समान व्याख्यान प्रारम्भ कर दिये। महात्मा जी ने सोचा कि यदि आज भी शास्त्रार्थ न हुआ तो ठीक न होगा। लगभग १५ मिनट समय बीतते बीतते महात्मा जी ने चमत्कार दिखाया। ईश्वर की प्रेरणा से ऐसी भयंकर आँधी आयी कि मालवीय जी को व्याख्यान बन्द कर देना पड़ा और मालवीय जी जाने लगे, किंतु ब्रह्मचारी गंगास्वरूप के प्रयत्न से रुक गये। पाँच ही मिनट में आँधी भी समाप्त हो गयी तथा महात्मा जी का और मालवीय जी का विचार विनिमय चला। दोनों पक्ष के वचन सभा में सभी जनता के सामने आये। अन्ततोगत्वा महात्मा जी ने गौरीशंकर गोयनका से पूछा कि दोनों पक्ष की बातें सुनी। तुमने उसमें क्या समझा? क्योंकि बुद्धि का स्वभाव है कि वह तत्त्व पक्ष-पातिनी होती है। गौरीशंकर गोयनका ने कहा कि महाराज शास्त्र का तात्पर्य तो यही समझ में आता है कि प्रणवयुक्त मन्त्र की दीक्षा अन्त्यजों को नहीं होनी चाहिए। फिर महात्माजी ने जयदयाल-गोयनका से पूछा कि तुम्हारा क्या विचार है, तो उन्होंने कहा कि महाराज वचन तो दोनों प्रकार के हैं परन्तु निषेध वचन प्रबल हैं। मालवीय जी ने भी स्वीकार किया और कहा वर्णाश्रमधर्म के लिए आप जैसे महात्माओं का मार्गदर्शन जनता को मिलना चाहिए। श्री गौरीशंकर गोयनका ने 'मननीय प्रश्नोत्तर' नाम से इस शास्त्रार्थ की पुस्तक प्रकाशित की।

अस्तु, ये महात्मा श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ही थे। पैदल ही अथवा नौका से चलना, कोई सवारी स्वीकार नहीं करना, कुछ साथ में रखना नहीं, इतना बड़ा त्याग, पण्डितों को भी सहज में ही आकृष्ट कर लेने वाला पाण्डित्य और जनता को मोहित कर देने

वाला वक्तृत्व इन तीनों गुणों का एकत्र अद्भुत समावेश इस महात्मा में देखा गया ।

काशी यात्रा

हरिद्वार की ओर से काशी पधारने पर काशी के प्रतिष्ठित लोगों ने श्रीमद्भागवत की रासपञ्चाध्यायी की कथा कहने की प्रार्थना की । रासपञ्चाध्यायी की कथा प्रारम्भ हुई । इसकी चर्चा विद्वानों तक पहुंची तथा उनका भी आकर्षण बढ़ा ।

अभिनव शंकराचार्य

काशी के प्रतिष्ठित वयोवृद्ध विद्वान श्री पण्डित सभापति शर्मोपाध्याय, श्री चण्डीप्रसाद शुक्ल, श्री रामयश त्रिपाठी (महाशय) प्रभृति विद्वानों ने स्वामी जी के विचार और पाण्डित्य पर सन्तोष व्यक्त किया और कहा इस तरह त्याग, वक्तृत्व और पाण्डित्य का अद्भुत समावेश एकत्र होना भगवान् की विशिष्ट विभूति में ही सम्भव है । इसीलिए पण्डितराज राजेश्वर शास्त्री द्राविड़, महानैयायिक पं० बालकृष्ण मिश्र, श्री महादेव शास्त्री, श्री सूर्यनारायणशुक्ल प्रभृति ख्यातनामा विद्वानों का झुकाव श्री स्वामी जी महाराज की ओर हुआ ।

दण्डग्रहण

एक दिन एकान्त में सुअवसर पाया तो गुरुदेव श्री स्वामी ब्रह्मानंद सरस्वतीजी से करपात्रीजी ने दण्डग्रहण की इच्छा व्यक्त की । गुरुदेव ने सोचा—'आज देश में दण्डी संन्यासियों में विद्वानों की कमी होती जा रही है, अतः ऐसे विद्वान को दण्ड ग्रहण करा कर एक आदर्श स्थापित करना ही चाहिए ।' और करपात्रीजी को दण्ड ग्रहण कराना स्वीकार कर लिया । श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती के कर कमलों द्वारा ही

सन् १९३१ में, लगभग २४ वर्ष की अवस्था में आपने विधिवत् दण्ड ग्रहण किया।

धार्मिक जगत 'करपात्री स्वामी हरिहरानन्द सरस्वती की जय' के निनाद से गूंज उठा। उसने एक अभिनव-शंकराचार्य के रूप में आपके दर्शन किये। धर्मप्राण भारत के लिए कितना महान् दिवस था वह।

धर्मसंघ की स्थापना

काशी में भी सनातन धर्म की कोई भी सभा नहीं चल पाती थी। आर्य समाजी और समाजवादी इतना उपद्रव करते थे कि सभा भंग हो जाती थी। पण्डितों की बात सुनने के लिए कुछ लोग तैयार भी होते तो उनपर इन गुण्डों का आतंक छा जाता था। तब श्री स्वामी जी महाराज ने 'धर्मग्लानि अधर्माभ्युत्थान निवृत्तिपूर्वक धर्मस्थापन के लिए भगवान् की प्रार्थना होनी चाहिए' ऐसा विचार किया और श्रीपंचानन तर्करत्न जी ने इसका संकल्प बनाया। बिन्ध्याचल धाम में जगदम्बा के चरणों में १९९४ विक्रम संवत (१९४० ई०) में विजयादशमी के शुभ दिन धर्मसंघ की स्थापना की गई। पंडितों का छात्रों का तथा अन्य लोगों का इसमें सहयोग मिला। भगवान की आराधना बढ़ी। फिर स्वामी जी महाराज की ही अनेक बड़ी-बड़ी सभायें हुई।

धर्मसंघ संगठन को सुदृढ़ और व्यापक बनाने के लिए सहयोगी एकत्रित करने के उद्देश्य से अब स्वामी जी की यात्रा प्रारम्भ हुई। हरिद्वार से गंगासागर तक और वहाँ से पुष्करराज तक उन्होंने पैदल यात्रा की। नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में स्वामी जी ने सनातन वैदिक धर्म का सन्देश सुनाया और 'धर्मसंघ' की शाखाए स्थापित कीं।

धर्मसंघ ने अ० भा० रूप ग्रहण किया। उसका कार्यक्रम एवं प्रचार भी बढ़ाया। महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, देवनायकाचार्य, मानस राजहंस पण्डित विजयानन्द त्रिपाठी प्रभृति भारतप्रसिद्ध विद्वानों का सहयोग पूज्य श्री स्वामी जी को प्राप्त हुआ। किन्तु धर्मप्रचार के उनके कार्य में जो उन्हें अनन्य सहयोगी के रूप में प्राप्त हुए वह थे पूज्यपाद श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज। इन वीतराग तपोमूर्ति महात्मा को धर्मसंघ ने अपना स्थायी सभापति निर्वाचित किया, श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी का पूर्ण सक्रिय सहयोग प्राप्त होते ही धर्मसंघ को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला।

जो बाद में पूज्य स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज को भारत के विद्वत् समाज ने ज्योतिष्पीठ का शंकराचार्य घोषित किया।

धर्मसंघ शिक्षामण्डल

धर्मसंघ के साथ-साथ पूज्य स्वामी जी ने भारतीय ढंग की शिक्षा के प्रचार के लिए 'धर्मसंघ शिक्षामंडल' नामक संस्था दुर्गाकुण्ड, वाराणसी में स्थापित की, आज इसके तत्त्वावधान में २० से अधिक संस्कृत विद्यालय चल रहे हैं।

पण्डित हरिहरकृपालु जी का आकर्षण

गोयनका संस्कृत महाविद्यालय में एक सभा पण्डितों की हुई। वहाँ पं० सभापति उपाध्याय जी ने पण्डितों से संघटन का प्रस्ताव किया। वहाँ एक पण्डित जी थे जिन्होंने कहा कि—'एकोद्देश्यपरायणसमस्तजनान्तःकरणत्वापरनामधेयस्वरूप ही तो संघटन है। यह तो असम्भव है,।' फिर स्वामी जी महाराज जो स्वयं ही उस सभा के अध्यक्ष थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि एकोद्देश्यपरायणसमस्तजनान्तःकरणत्वा परनामधेयस्वरूप को संघटन का लक्षण करके उसका खण्डन करते हैं, वे क्या संघटन का यह लक्षण करके उसका खण्डन नहीं कर सकते।

स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की यह एक अद्वितीय विशेषता है कि किसी की कोई बात शास्त्रानुमोदित भी भले न हो पर शास्त्राविरुद्ध हो तो मान जाना और यदि शास्त्रविरुद्ध हो तो उसे यावद् बुद्धिबलोदय दूर करना। किन्तु कतिपय लोगों के आग्रहवश स्वामी जी का तथा श्री हरिहरकृपालु द्विवेदी जी का शास्त्रार्थ सांगवेद विद्यालय में होना तय हुआ जो विद्वानों और विशेष रूप से गौरीशंकर गोयनका के बीच बचाव से स्थगित हो गया। अन्त में पूज्य संन्यासी से मनोमालिन्य उचित न समझ कर म० म० श्री हरिहरकृपालु द्विवेदी जी ने स्वामी जी के समीप जाकर सौमनस्य स्थापित किया और अन्त तक स्वामी जी के समर्थक रहे।

स्वामी रामदेव जी से वाद

'सिद्धान्त' साप्ताहिक के पुराने पाठकों को भूला न होगा कि एक बार ऐसा ही शास्त्रार्थ श्री स्वामी रामदेव जी महाराज से, श्री स्वामी जी महाराज का हो गया। श्री स्वामी रामदेव जी का पक्ष था कि संन्यास (चतुर्थ) आश्रम त्याग का आश्रम है, संग्रह का नहीं। श्री भगवान् कृष्णद्वैपायन कह रहे हैं, 'मोक्षस्य सर्वोपरमः क्रियाभ्यः' क्रियाओं (कर्मों) से उपरति ही मोक्ष का मूल है। भगवती श्रुति कहती है—'न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः' त्याग से अमृतत्व की प्राप्ति होती है। अतः संन्यास आश्रम के बाद फिर मठों का संग्रह, लक्ष्मी का संग्रह उचित नहीं आदि आदि।

श्री स्वामी जी महाराज का कहना था कि 'संन्यास आश्रम त्याग का है, इसमें दो राय नहीं है। किन्तु साधारण संन्यासी और आचार्य-दीक्षा सम्पन्न संन्यासी में महान अन्तर है। अग्निपुराणादि में समयाचार दीक्षा से आचार्य दीक्षा कही गई है। उसका निपुणता से उपपादन

वीरमित्रोदय आदि निबन्ध ग्रन्थों म किया गया है। महर्षि जैमिनि ने भी अपनी मीमांसा के पहले पाद श्रुतियों का प्रामाण्य निर्धारित कर 'धर्मस्य शब्दमूलत्वाद् शब्दमनपेक्षं स्यात्' इस सूत्र से श्रुतियों में जिनका मूल नहीं मिलता, उनका अप्रामाण्य है ऐसा पूर्व पक्ष करके 'अपि वा कर्तृसामान्यात्, प्रमाणमनुमानं स्यात्, विरोधे त्वनपेक्षं स्यात् असतो ह्यनुमानम्' आदि सूत्रों द्वारा (भले ही श्रुति में मूल न मिलता हो किन्तु कोई विरोधिनी श्रुति न हो तो) ऐसी भी स्मृतियों का प्रामाण्य माना है। अतः आचार्यदीक्षा सम्पन्न संन्यासी के लिए मठादि संग्रह शास्त्रानुमत है, शास्त्रनिषिद्ध नहीं। श्री स्वामी रामदेव जी ने उन वचनों को क्षेपक माना। बस, शास्त्रीय वचनों को क्षेपक कहना ही असमर्थता थी और लेखबद्ध शास्त्रार्थ बन्द हो गया।

मध्वाचार्य जी से शास्त्रार्थ

एक बार देवास से श्री स्वामी जी महाराज हरिद्वार पहुँचे। वहाँ जाने पर सुना कि मध्वसम्प्रदाय के आचार्य श्री स्वामी विद्यामान्य तीर्थ ने अद्वैत मत को आसुरमत घोषित किया। उनकी ओर से जो नोटिस प्रकाशित हुई उसमें श्रीमद्भगवद्गीता के 'असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुर-नीश्वरम्। अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहेतुकम्॥' (श्रीभ०गी०१६।८) श्लोक का उद्धरण देकर उसका प्रतिपाद्य अद्वैत मत बताया गया था।

श्री स्वामी जी महाराज ने कहा कि यहाँ इतने बड़े-बड़े विद्वान मण्डलेश्वर लोग हैं, इन लोगों ने अद्वैत मत का पराभव स्वीकार कैसे किया? कोई बोला क्यों नहीं? 'श्री स्वामी जी महाराज का सभा में सिंह गर्जन सुनकर अन्य मण्डलेश्वरों को भी जोश आया और उन्होंने अपना प्रतिनिधि एक महात्मा को भेजकर कहा कि महाराज हम लोग

मध्व सम्प्रदाय के आचार्य से शास्त्रार्थ के लिए तैयार हैं, आप मध्यस्थ हो जाइये। श्री स्वामी जी महाराज ने उत्तर दिया कि मध्यस्थ क्या, मैं शास्त्रार्थ ही कर लूंगा, व्यवस्था होनी चाहिए।

शास्त्रार्थ का स्थल समय सब निर्णीत हो गया। सभा स्थल में पहुँचने पर दोनों पक्षों की ओर से शास्त्रार्थ की शर्तें तय हुईं और मध्यस्थ भी तय हो गये। दोनों पक्षों के हस्ताक्षर के बाद शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। दूसरे दिन श्री विद्यामान्यतीर्थ जी अपना पराभव होते देख बिना उत्तर दिये ही मैदान छोड़ कर चले गये। मध्यस्थ ने श्री स्वामी विद्यामान्यतीर्थ की पराजय घोषित करते हुए विजय श्री स्वामी जी महाराज के पक्ष में दी।

शास्त्रार्थ प्रतिष्ठा के लिए नहीं

श्री स्वामी जी महाराज अपनी प्रतिष्ठा, ख्याति, मान, लाभ आदि के लिए शास्त्रार्थ के पक्षपाती नहीं हैं, किन्तु उनका सिद्धान्त है 'वादे वादे जयते तत्त्वबोधः।' दो पक्षों से जब विचार चलता है तो उसमें अन्त में तत्त्व निर्णय होता है। हरिद्वार शास्त्रार्थ में विजय के अनन्तर मण्डलेश्वरों की ओर से बड़ी ही सुन्दर महर्घ रुद्राक्ष की माला और फल आदि स्वामी जी के पास भेज कर कहा गया कि महाराज हमलोग विजयोत्सव यात्रा (जुलूस) निकालना चाहते हैं। आपको हाथी पर चढ़ाकर कल सारे शहर में घुमायेगे, आप अनुमति दें। श्री स्वामी जी महाराज ने कहा ऐसा करना उचित न होगा। कारण शास्त्रार्थ तत्त्व निर्णय के लिए होता है किसी के पराभव के लिए नहीं। तत्त्वनिर्णय हो गया। अब यहीं विषय यह समाप्त कर देना चाहिये।

यज्ञों का सूत्रपात

धर्मसंघ का अधिवेशन और यज्ञों का सूत्रपात धर्मसंघ की स्थापना के बाद हुआ। संवत् १९९८ में प्रयाग कुम्भ के अवसर पर

श्री स्वामी जी महाराज लगभग एक मास प्रयाग में रहे। वहाँ धर्मसंघ का प्रचार होता रहा तथा धर्मसंघ के 'धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थान-निवृत्तिपूर्वकधर्मसंस्थापनार्थम्', इस पवित्र संकल्प से यज्ञ रूप में देवाराधन भी चला। उस समय पैदल ही यात्रा हो रही थी। प्रयाग से श्री स्वामी जी महाराज ऋषिकेश पहुंचे। संवत् १९९९ में ज्येष्ठ मास, अधिक मास था। उसी समय श्री स्वामी जी महाराज का विचार धर्मसंघ के संकल्प से एक लाख पार्थिव पूजन द्वारा पुरुषोत्तम मास से भगवान् साम्ब सदाशिव की आराधना का हुआ। श्री स्वामी सोमेश्वराश्रम (जिन्हें प्रभास भिक्षुक कहा जाता था) द्वारा श्री मार्कण्डेय ब्रह्मचारी को महाराज जी ने पार्थिव पूजा की दीक्षा दिलवाई और उन्हें एक लाख पार्थिव पूजन का प्रधान यजमान बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

पैदल यात्रा का क्रम

पुरुषोत्तम मास के अनन्तर स्वामी जी हृषीकेश से चले। कुछ दिन में दिल्ली आये। मेरठ में श्री स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज भी मिल गये। दोनों महात्मा वहाँ से व्रज आये। वृन्दावन में चातुर्मास्य हुआ। चातुर्मास्य के अनन्तर कार्तिकी पूर्णिमा पर पुष्कर पहुंचे। वहाँ से श्री स्वामी जी महाराज ने उदयपुर की यात्रा की। इसी यात्रा में ब्यावर में पण्डित रामप्रताप शास्त्री मिले। उनके यहाँ प्रवचन में 'यदनुचरितलीलाकर्ण-पीयूषविप्रुट् सकृददनविधूतद्वन्द्व-धर्मादिनिष्ठाः'' की व्याख्या करते हुए श्री स्वामी महाराज ने कहा— पण्डित जी 'गार्हस्थ्यं कम्पते।' श्री शास्त्री जी ने कहा। आज हमारे घर साक्षात् मूर्तिमान संन्यास पधारा है। वहाँ से कांकरौली होकर उदयपुर गये। इस प्रकार धर्मसंघ के प्रचार में पैदल घूमते हुए जम्बू पहुँचे तथा वहाँ यह पता चला कि श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज ने

शतमुखकोटि होम का विचार किया है, और श्री स्वामी जी महाराज की प्रतीक्षा है।

दिल्ली का यज्ञ

चातुर्मास्य समाप्ति के अनन्तर जम्मू से प्रस्थान कर स्वामी जी को ऋषिकेश में आहिताग्नि श्री बालक रामजी से बात हुई। वहाँ से देहली आकर यमुना के दूसरे किनारे में शतमुख कोटि होम का आयोजन हुआ। कहा जाता है कि महाराज वीर विक्रमादित्य के समय में ही ऐसा शतमुखकोटिहोम हुआ होगा। उसके बाद संवत् १९९९ के माघ मास में इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) का यह यज्ञ प्रथम बार हुआ। यज्ञ के दर्शनार्थं बहुत दूर-दूर से जनता उमड़ पड़ी और मिलिट्री की नावों का पुल बना।

दक्षिणा वितरण के अनन्तर श्री स्वामी जी महाराज ने क्या रुपया बचा, क्या सामग्री बची, किसी की ओर ध्यान न देकर अपना दण्ड कमण्डलु लेकर प्रस्थान कर दिया। बाद में वहां धर्मसंघ महाविद्यालय की स्थापना हुई।

कानपुर का यज्ञ

दिल्ली यज्ञ में ही कानपुर के सुदर्शन वाजपेयी, आदि सज्जन मिले और कहा कि महाराज कानपुर में भी आयोजन होना चहिए। श्री स्वामी जी महाराज दिल्ली से कानपुर पधारे। सं० १९९९ माघ में दिल्ली का यज्ञ हुआ था। संवत् २००० के प्रारम्भ में कानपुर का शतमुखकोटि होम हुआ। कानपुर में परिस्थिति यज्ञ के अनकूल नहीं प्रतीत हुई। अतः यज्ञ गंगापार उन्नाव जिले में रखा गया। सुनने में आया कि कतिपय धनी एवं प्रतिष्ठित लोगों ने यज्ञ के विरोध के लिए जी तोड़ परिश्रम किया। वहाँ प्राकृतिक प्रकोप भी था। कपड़े का मण्डप था। आंधी वर्षा आते ही गिर जाता था।

श्री स्वामी जी महाराज ने कहा कि अभी देवता कमजोर हैं। कल उनके मुख में आहुति पड़ते ही उनका बल बढ़ेगा और यह उपद्रव शान्त हो जायगा। हुआ भी वैसा ही। श्री गणपति जी दीक्षित (काशी के परम वैदिक) आचार्य और ब्रह्मचारी जीवनदत्त जी महाराज यजमान थे। विरोधी लोगों ने सोचा था कि यज्ञ सम्पन्न न हो सकेगा, परन्तु एक विश्ववन्द्य महात्मा का पवित्रतम संकल्प सफल हुआ और जगदम्बा की कृपा से दक्षिणा आदि सभी कुछ पूर्ण हो गया तथा यज्ञस्थल में घोषणा की गयी कि यज्ञ का सारा कार्य पूर्ण हो गया है। अब यहाँ कुछ भी रिक्तता नहीं है।

काशी का यज्ञ—

कानपुर से काशी नाव से यात्रा हुई। ६ दिन में नाव काशी आ गई। फिर उस वर्ष यहाँ यज्ञ का आयोजन हुआ। यहाँ ११ अतिरुद्र, १ महारुद्र और अष्टोत्तरशत श्रीमद्भागवतसप्ताह यज्ञ हुए। भगवती भागीरथी के किनारे का नगवा का सारा मैदान जनता से भरा रहता था। चारों शंकराचार्यों से सभास्थल शोभित था। यज्ञ समाप्ति के दिन यह अद्भुत आश्चर्य देखने में आया कि भाषण सुनते रात्रि में ११ बज गया। जनता स्वामी जी महाराज का भाषण सुनने के लिए उतावली हो रही थीं, कोई भी भाषण देने के लिए उठता था, तो लाखों कण्ठों से आवाज निकलती थी कि बैठ जाइये, हम स्वामी जी महाराज का भाषण सुनना चाहते हैं। फिर जितने प्रस्ताव अवशिष्ट थे अध्यक्ष की ओर से स्वीकार कर लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। बस, धन्यवाद देना अवशिष्ट रहा। धन्यवाद देने वाले सज्जन इतनी मधुर वाणी में धन्यवाद देते रहे और ४५ मिनट बोल गये कहीं से भी कोई आवाज जनता की ओर से नहीं उठी। वे धन्यवाद देने वाले सज्जन हैं कविराज ब्रजमोहन जी दीक्षित। उसके बाद श्री स्वामी जी महाराज का भाषण सुनकर

जनता संतुष्ट हृदय से वहाँ से गयी। यहाँ से यज्ञों की परम्परा चालू हो गयी। इससे श्री स्वामी जी महाराज एक प्रकार से यज्ञ युग प्रवर्तक के रूप में प्रसिद्ध हुए।

विविध स्थलों के यज्ञ—

काशी महायज्ञ के बाद लखनऊ में लक्षचण्डी महायज्ञ में श्री स्वामी जी महाराज ने जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी ब्रह्मानन्दसरस्वती (ज्योतिष्पीठाधीश्वर) के दृढ़ अनुरोध से मोटर की यात्रा स्वीकार की और वहाँ से मोटर से यात्रा प्रारम्भ हो गयी। महाराणा भूपाल सिंह की साग्रह प्रार्थना स्वीकार कर श्री स्वामी जी महाराज ने उदयपुर में चातुर्मास्य स्वीकार किया और वहाँ लक्षचण्डी यज्ञ हुआ।

कठिन व्रत एवं नियम—

उन दिनों श्री स्वामी जी महाराज का व्रत चल रहा था। वहाँ उनके मन में सहसा विचार आया कि एक दिन भोजन किया जाय एक दिन नहीं और यही नियम चालू हो गया। दैवात् एक दिन ऐसा समय आया कि जिस दिन भोजन लेना था एकादशी आ पड़ी। फिर दो दिन के बाद फलाहार का नियम चला। पुनः किसी समय फलाहार के दिन एकादशी पड़ गयी। श्री स्वामीजी महाराज एकादशी व्रत सदा निर्जल रहते हैं। अतः उस दिन से तीन दिन के बाद चौथे दिन फलाहार का नियम रहा। उदयपुर चातुर्मास्य के समय यही नियम चल रहा था। यह नियम बढ़ते-बढ़ते सात दिन का हुआ। उस समय श्रीमद्भागवत का सप्ताह करके फिर फलाहार ग्रहण किया जाता था।

उदयपुर के बाद बम्बई में लक्षचण्डी यज्ञ हुआ। इसी लक्षचण्डी यज्ञ की सभा में धर्मरक्षा की बात चली तो सहसा जामनगर के

राजा ने अपनी तलवार चमकाते हुए कहा था कि धर्म की रक्षा यह भवानी करेगी।

हिन्दू कोडबिल

उन्हीं दिनों सरकार की ओर से एक हिन्दूकोड कानून हिन्दुओं के लिए बनाने की बात उठी। टी० आर० वेंकटरमन शास्त्री आदि चार एडवोकेट लोगों ने हिन्दू कोडबिल का ड्राफ्ट किया। उसका जो हिन्दी अनुवाद छपा उसका नाम था हिन्दू धर्मशास्त्र संग्रह इसमें सभी बातें हिन्दू धर्मशास्त्रों के विपरीत रखी गयी थी। श्री स्वामी जी महाराज ने उस समय भारत के विभिन्न क्षेत्रों का दौरा किया और हिन्दू कोड विरोधी समिति की स्थापना की। हिन्दू कोड को पास करने के लिए पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अथक परिश्रम किया। अपने के त्यागपत्र की धमकी भी उन्होंने लोक सभा में दी, परन्तु हिन्दू कोडबिल पास न हो सका। अन्त में खण्ड खण्ड होकर वह कोडबिल पास किया गया। हिन्दू कोडबिल के सम्बन्ध में सरकारी, गैरसरकारी सभी विशिष्ट व्यक्तियों ने पूज्य चरणों की राय जाननी चाही थी। इनके वक्तव्य तथा टिप्पणियों से इस सन्दर्भ में इनके विचारों की लोगों को पूर्ण जानकारी हो रही थी, फिर भी श्रीधारपूरे तथा कुछ अन्य 'सदस्यों ने पूज्य स्वामी जी महाराज से भेंट कर यह कहा कि, यदि वेदादिशास्त्रों के अनुसार ही कोड बने तथा उस शास्त्रों का अनुवाद करने वाले वसिष्ठादि जैसे महर्षि हों और उसे ही कोड का रूप दिया जाय तो उसे स्वीकर करने में क्या आपत्ति हो सकती है?

पूज्य चरणों ने इसके उत्तर में यह कहा था कि, अंग्रेजों के समय हिन्दू कानून मिताक्षरा, दायभाग, नारद, अंगिरा आदि स्मृति के वचनों का अनुवाद मात्र रहा है। न्यायालयों के निर्णयों ने

भी इस कानून के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किसी प्रकार की संशय की स्थिति में न्यायालय ने सम्बद्ध विषयों के विद्वानों को बुलाकर; उनकी राय लेकर ही, निर्णय दिया है। यदि कोई विद्वान न्यायालय को यह विश्वास दिला देता था कि पूर्व का अनुवाद तथा उसके अनुसार दिया गया निर्णय मूल ग्रन्थों के सर्वथा विपरीत है, तो न्यायालय को यह अधिकार था कि प्राचीन अनुवाद एवं नजीरों की उपेक्षा कर मूल ग्रन्थ के अनुसार निर्णय बदल दे। कोड के बन जाने पर न्यायालय में कोड ही विचार का आधार होगा, वह मूल ग्रन्थ पर विचार करने को बाध्य नहीं होगा। न्यायालय द्वारा दी गयी व्याख्या को मूल ग्रन्थों के विपरीत होने का विश्वास दिलाये जाने पर भी न्यायालय कोड को ही प्रमाण मानेगा ?' श्री धारपूरे जी पूज्य चरणों के इस मत से सर्वथा सहमत थे।

गोहत्या का प्रतिरोध—

गोहत्या बढ़ती देखकर श्री स्वामी जी महाराज ने सभी आस्तिकों का एक मोर्चा संघटित किया। वहाँ 'धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो, हरहर महादेव, इन नारों के साथ ५ नारे और जोड़े गये। गोहत्या बन्द हो, भारत अखण्ड हो, धर्म में हस्तक्षेप न हो, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित रहे और विधान शास्त्रीय हो। जब देश का विभाजन होने लगा तो अपने सत्याग्रहियों के साथ श्री स्वामी महाराज ने भारत अखण्ड हो का नारा बुलन्द किया और सत्याग्रह करके जेल में गये। अब पूरे देश में गोबध बन्द करने पर सरकार भी विचार कर रही है।

गांधी जी से पत्र व्यवहार :—

श्री गाँधी जी ने भी एक बार पत्र भेज कर श्री स्वामी जी महाराज से मिलने की इच्छा व्यक्त की। श्री स्वामी जी महाराज ने

श्री गांधी जी को उत्तर देते हुए लिखा कि मिलने के पहले आप हमारा उद्देश्य समझ लें। फिर आवश्यक हो तो मिलकर बात कर ली जाय, अन्यथा केवल मिलने से कुछ लाभ न होगा। फिर उन्होंने अपना उद्देश्य भी स्पष्ट रूप से लिखकर गांधी जी के पास भेजा। गांधी जी ने पत्र प्राप्ति स्वीकृति भेजते हुए लिखा कि 'पत्र में बोध ही था उसमें मेरे कुछ कहने जैसा न था अतः समय बचा लिया।'

डा० लोहिया का निवेदन

डाक्टर राममनोहर लोहिया ने एक बार श्री स्वामी जी महाराज को पत्र लिखा था कि चीन की सीमा पर एक चोकी है। वह भारत की है। ब्रिटिश शासन काल में वहाँ उर्वाशियम नाम से पर्ची कटती रही हैं। अब भारत सरकार उस स्थान को चीन को देने जा रही है। इसका विरोध अब सांस्कृतिक स्थान की रक्षा हेतु होना चाहिए।

जब डा० लोहिया ने वेदस्तुति का पाठ सुना

१९६६ में पूज्य चरणों को गोहत्या विरोधी आन्दोलन में तिहाड़ जेल में रखा गया था। उसी समय डा० लोहिया भी जेल में थे, और वे महाराज जी के पास पहुंच गये। महाराज ने उनके सम्मान में वेदस्तुति का पाठ बन्द करना चाहा किन्तु डा० लोहिया ने कहा कि 'मैं भी पाठ सुनूंगा,' उसके बाद प्रतिदिन वे पाठ में आया करते थे।

गोलवरकरजी की प्रेस वार्ता

हिन्दू कोड विरोधी समिति जब कार्य कर रही थी उस समय श्री माधवसदाशिव गोलवरकर जी श्री स्वामी जी महाराज जी से दिल्ली में मिले। उसके बाद पत्रकारों से उनकी बात हुई। पत्रकारों ने अनेक प्रकार से घूमा-फिराकर प्रश्न किया।

उन्होंने उत्तर दिया कि सामने एक हिन्दू संस्कृति का बक्स रखा है, उसके भीतर क्या है, यह हम नहीं जानते। उसकी व्याख्या महात्मा लोग करेंगे, स्वामी करपात्री जी करेंगे, हमारा कार्य तो इतना ही है कि उस बक्स पर कोई गुण्डे, बदमाश, चोर, डाक, कुत्ते आदि हमला नहीं करने पायेंगे। हम लोग उसकी रक्षा करेंगे।

गांधी जी की मृत्यु पर संवेदना

प्रयाग में श्री स्वामी जी ओजस्वी भाषण दे रहे थे। वे कह रहे थे कि यह आप समझते हैं कि जो लोग कह रहे हैं कि हिन्दू राज्य नहीं होगा, वे क्यों ऐसा कह रहे हैं? वे समझते हैं कि जिस दिन हिन्दू राज्य होगा, उस दिन उन्हें अदालत में खड़ा किया जाएगा और उनके ऊपर वैसे ही मुकदमा चलाया जायगा जैसे कि सर मार्शल पेंतां पर चलाया गया था। भाषण समाप्त कर स्वामी जी महाराज के अपने निवास स्थान की ओर चलते ही किसी ने कहा कि गाँधी जी को गोली मार दी गयी। स्वामी जी के मुख से निकला बड़ा अनर्थ हुआ।' स्वामी जी ने तुरन्त सभा में जाकर समवेदना प्रकट की।

श्री गांधी जी की मृत्यु के बाद तत्काल ही राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ अवैधानिक घोषित किया गया। उसके गण्यमान्य सभी कार्यकर्त्ता जेल में डाल दिए गये। श्री स्वामी जी महाराज भी प्रयाग से काशी आये और काशी में गिरफ्तार हो गये। छः मास के लिए नजरबन्द करके इन्हें सेण्ट्रल जेल वाराणसी में रखा गया था। किन्तु छः मास की अवधि के पहले ही स्वामी जी महाराज जेल से छोड़ दिए गये। कलक्टर ने बिना किसी पूर्व सूचना के अपनी कार से स्वामी जी को उनके निवास स्थान पर भेज दिया।

निर्भीक स्वामी जी

गोलवरकर के विरुद्ध उस समय की पत्र पत्रिकाएं जहर उगल रही थी। श्रीस्वामी महाराज प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने अपने भाषणों में कहा

था कि सिंह को कठघरे में बन्द करके उस पर तरह-तरह के मनमाने आरोप लगाना कथमपि उचित नहीं। सरकार को खुली अदालत में गोलवलकर पर मुकदमा चलाना चाहिए। अपने विभिन्न स्थानों के प्रत्येक भाषणों में यह बात चलती रही। कुछ दिन के बाद श्री गोलवलकर जी छोड़ दिये गये।

सन्मार्ग पत्र

जब पत्रों ने धार्मिक समाचार छापने को कौन कहे मखौल उड़ाना प्रारम्भ किया तब अपना सन्देश जन-जन तक पहुंचाने के लिए स्वामी की ने सन्मार्ग पत्र प्रकाशन का निर्णय लिया जो कलकत्ता तथा वारांणसी से प्रकाशित हो रहा है।

राजनीति की ओर झुकाव

काशी जेल में ही श्री स्वामी जी महाराज का विचार राजनीति की ओर अग्रसर हुआ और बाहर आकर उन्होंने १९५२ ई० में अखिल भारतीय रामराज्य परिषद् की स्थापना की। रामराज्य परिषद् के प्रचार के लिए जुट गये।

स्वामी जी का राजनीति दर्शन

पूज्य स्वामी जी महाराज व्यास, वशिष्ठ, मनु, नारद, शुक्र एवं बृहस्पति की परम्परा के राजनीतिक दार्शनिक, भारतीयता के सच्चे द्रष्टा तथा आधुनिक विश्व के सर्वोत्कृष्ट मौलिक विचारक हैं। आधुनिक युग में राजनीति शब्द शासक एवं शासितों के सम्बन्धों का द्योतन कराने वाला शब्द बन गया है। अतः स्वामी जी ने भी राजनीतिक दर्शन का विवेचन करते समय राजनीति का मुख्य उद्देश्य, समष्टि व्यष्टिजगत को लौकिक पारलौकिक उन्नति एवं परम निःश्रेयस (भगवत् पद प्राप्ति के लिए सब प्रकार की सुविधायें उपस्थित करना और उसके मार्ग में आने वाली विघ्न बाधाओं को दूर करना माना है। 'मार्क्सवाद

ओर रामराज्य' नामक पुस्तक में उन्होंने लिखा है कि 'राजनीति शास्त्र या दर्शन का कार्य राजाओं, शासकों एवं तत्पालित भूखण्ड या अखण्ड भूमण्डल, या प्रपंच मण्डल के प्राणियों के लिए ऐहिक आमुष्मिक अभ्युदय एवं परम निःश्रेयस प्राप्ति का प्रशस्त मार्ग और अनुष्ठान सुविधा प्रत्युपस्थापन करना है।'

शास्त्रीय शासन विधान

अपने राजनीतिक दर्शन के इस मूल उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने शास्त्रीय शासन विधान का सिद्धान्त उपस्थित किया है, जिसमें सभी प्राणियों को अमृत स्वरूप परमेश्वर का ही पुत्र माना जाता है। इस ऐक्य भावना की घनीभूतता के कारण ही भ्रातृता, आत्मीयता तथा आत्मैक्यता की भावना का उस बिन्दु तक विकास होता है, जहाँ 'सर्वजन हिताय' एवं 'सर्वजन सुखाय' की राजनीति को कार्यरूप में परिणत किया जा सकता है। ऐसे शास्त्रीय शासन विधान में वेदों एवं मान्वादि धर्मशास्त्रों को ही राष्ट्र का संविधान एवं कानून माना जाता है। फलतः स्वामी जी शास्त्रज्ञों एवं सदाचारी धर्मनिष्ठ विद्वानों की एक विधान निर्णेत्री परिषद् की स्थापना की बात करते हैं जिसकी सहायता के लिए शासक शास्त्रानुसारी ढंग से शासन एवं शासितों की ईश्वर परायणता एवं धर्मनिष्ठा आवश्यक है।

स्वामी जी के राजनीतिक दर्शन का मुख्य उद्देश्य एक धर्म नियन्त्रित राज्य की स्थापना करना है जिसमें व्यक्ति अपनी धार्मिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के द्वारा लौकिक एवं पारलौकिक लक्ष्यों की प्राप्ति कर सके। उन्होंने व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा विश्व के धारण, पोषण, योगक्षेम, समन्वय, सामंजस्य, संगठन तथा लौकिक पारलौकिक अभ्युत्थान एवं परम निःश्रेयस प्राप्त कराने वाले तत्त्व को धर्म कहा है। वस्तुतः यही उनके अनुसार राजनीतिक दर्शन का मूल उद्देश्य भी है।

धर्म और नीति

पूज्य स्वामी जी ने अभ्युदय को धारण कराने वाले तत्त्व को 'धर्म' तथा प्राप्त कराने वाले तत्त्व को 'नीति' कहा है। फलतः दोनों ही समानार्थक हैं। अतः धर्म को राजनीति से पृथक् नहीं किया जा सकता। उनका कहना है कि 'वास्तव में धर्म नीति का पति है उससे विरहित रह कर नीति विधवा है। धर्म विरुद्ध नीति कहीं तत्काल अभ्युदय का साधन होती हुई भी परिणाम में अहितकारिणी सिद्ध होती है। समस्त महाभारत इसका ज्वलन्त उदाहरण है। अतः राज्य का मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक स्वतन्त्रता के निर्मल वातावरण का निर्माण करना है। इस प्रकार के धार्मिक वातावरण में ही व्यक्ति धर्मनिष्ठ विवेकी तथा सात्त्विक हो सकते हैं। आध्यात्मिकता की भावना का विकास होने से सात्त्विक वृत्ति का उदय होता है फलतः व्यक्ति का अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है। इससे सब एक दूसरे के पोषक, रक्षक एवं हितचिन्तक बन जाते हैं। सब लोग धर्म नियन्त्रित होकर एक दूसरे का पूरक बनते हैं। इससे न केवल व्यक्ति का वरन् एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र से मनोमालिन्य समाप्त हो जाता है। प्रतिस्पर्धा तथा संहार की प्रवृत्ति का अन्त हो जाता है। इस प्रवृति के अन्त तथा सद्भावना की उन्नति के साथ-साथ मानवता विजयिनी होकर अपने अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त कर लेती है। ऐसी दशा में संहारक अस्त्रों के निर्माण की होड़ नहीं लग सकती। अतः धर्म नियन्त्रित राज्य की स्थापना द्वारा मनुष्य को अपनी आध्यात्मिकता की रक्षा करनी चाहिए।

धर्मसापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य

पूज्य स्वामी जी महाराज अपने उपर्युक्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक धर्म सापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य की स्थापना की बात करते हैं

धर्म सापेक्ष राज्य का तात्पर्य बतलाते हुए उन्होंने 'विचारपीयूष' नामक पुस्तक में लिखा है कि 'राजनीति, अर्थशास्त्र, कला, समाजशास्त्र इतिहास आदि का प्रयोग और व्याख्या धर्म के आधार पर की जाय एवं उसे जीवन में व्यावहारिक रूप दिया जाय।' वे राज्य द्वारा मात्र इस व्यवस्था के कार्यान्वियन के पक्षपाती हैं, संशोधन, परिवर्तन या परिवर्धन के नहीं। स्वामी जी के धर्म सापेक्ष राज्य का कथमपि यह तात्पर्य नहीं है कि किसी धर्म या सम्प्रदाय विशेष का शासन हो और अन्य धर्म या सम्प्रदाय शासन से दूर और उपेक्षित रहें। स्वामी जी का यह अभिमत है कि समाज का जो अंग जिस धर्म में विश्वास रखता हो उसके अनुकूल जीवन बिताने की पूर्ण स्वतन्त्रता और व्यवस्था होनी चाहिए।

धार्मिक संस्थानों का प्रशासन

धर्म नियन्त्रित राज्य के विषय में अपनी विचारधारा को स्पष्ट करने के पश्चात् पूज्य स्वामी जी ने मठ, मन्दिरों एवं अन्य धार्मिक संस्थानों के प्रशासन के पहलू पर भी गम्भीर विचार व्यक्त किया है। उनका कहना है कि मठ मन्दिर देवस्थान तथा अन्य धार्मिक स्थल अपने-अपने सम्प्रदाय के नियमों से आबद्ध हैं। उनके संचालन के लिए शास्त्रीय संविधान रीति-रिवाज तथा परम्परा के अनुसार इनका संचालन शास्त्रीय संविधानों तथा रीति-रिवाजों के अनुसार ही होना चाहिए। यदि व्यवस्था में अव्यवस्था उत्पन्न होती है, तब शासन को शास्त्रीय नियमों के सन्दर्भ में ही व्यवस्था ठीक करने का प्रयास करना चाहिए।

लोकतन्त्र का स्वरूप

स्वामी जी महाराज लोकतन्त्र को आधुनिक युग की सबसे अच्छी प्रशासन पद्धति मानते हैं। वे लोकतन्त्र का मूल स्रोत अरबों वर्ष पूर्व हुए रामराज्य में देखते हैं, जहाँ लोकमत का इतना आदर था कि

एक साधारण नागरिक की बात भी नीति निर्धारण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती थी। अतः लोकतन्त्र शब्द भारत के लिए नया नहीं है। स्वामी जी द्वारा परिकल्पित धर्म नियन्त्रित शासन में आदर्श जनतन्त्र की सभी विशेषतायें उपस्थित हैं। इन विशेषताओं को उन्होंने प्राचीन भारतीय राजनीतिक दर्शन एवं राज्य व्यवस्था में भी पाया है। जनतन्त्र में शासन की सर्वोच्च सत्ता जनता में निहित होती है। जनता के लिए जनता द्वारा जनता का शासन ही जनतन्त्र शासन कहलाता है। इस जनतन्त्र की सफ़लता के लिए स्वामी जी ने दो अवश्यक तत्त्व माने हैं। १—जनता की सावधानी, सतर्कता एवं जागरूकता। २—चुनावों का इतना सस्ता होना कि साधारण नागरिक भी आसानी से चुनाव लड़ सकें।

स्वामी जी निर्धनता को जनतन्त्र की सुविधाओं की प्राप्ति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा मानते हैं। उनके अनुसार, 'जनतन्त्र वहाँ रहता है जहाँ जनहा में नापसन्द सरकार को बदल देने की ताकत बनी रहती है।' जहाँ की जनता में निर्वाचन जीतने की शक्ति बनी रहती है, वहीं जनता में सरकार को बदल देने की ताकत रहती है। जनता में निर्वाचन जीतने की शक्ति वहीं रहती है जहाँ निर्वाचन सस्ता होता हो और प्रत्येक नागरिक के पास निर्वाचनोपयोगी उचित साधन विद्यमान हों। जहाँ निर्वाचन मंहगा होता है और जनता के पास उचित साधन नहीं होते, वहाँ जनतन्त्र असम्भव होता है।'

इस प्रकार स्वामी जी ने आधुनिक युग में जनतन्त्र के वास्तविक स्वरूप को सही पहचाना है। आधुनिक राजनीतिक दार्शनिक भी जनतन्त्र के व्यावहारिक पहलुओं का गम्भीर अध्ययन कर उसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं। स्वमी जी ने यह ठीक ही कहा है कि कहीं-कहीं सरकारें चुनाव व्यय को सीमित करने का कानून बनाती हैं। पर वे कानून व्यवहार में अत्यन्त प्रभावहीन सिद्ध हुए हैं।

स्वस्थ जनतन्त्र के साधन

स्वामी जी ने जनतन्त्र की सफलता के लिए निम्न उपाय सुझाए हैं।

१—निर्वाचकों एवं निर्वाचितों की विशेष योग्यता, धार्मिकता, नैतिकता इत्यादि का स्तर निर्धारित किया जाना चाहिए। इससे अच्छे लोग चुने जा सकेंगे।

२—चुनाव प्रकार के ढंग को व्यवस्थित करना चाहिए। प्रचार का सर्वोत्तम तरीका यह है कि सरकारी रेडियो एवं समाचार पत्रों द्वारा प्रत्येक उम्मीदवार को अपनी नीति, मन्तव्य एवं उद्देश्य को प्रचारित करने का अवसर दिया जाय।

३—प्रत्येक प्रकार का अनियन्त्रित प्रचार बन्द होना चाहिए।

४—जनता को उदारता, गम्भीरता और दक्षता के साथ राष्ट्र एवं धर्म का हिताहित देखकर अपने कर्त्तव्य का निर्धारण तथा उसका पालन करना चाहिए।

५—धर्म की स्थापना तथा लोकधर्म के सच्चे फल की प्राप्ति के लिए विद्वानों महात्माओं एवं दक्ष व्यक्तियों को पूर्ण प्रयास करना चाहिए।

६—आध्यात्मवाद पर आधारित धर्मनियन्त्रित शासनतन्त्र का सिद्धान्त मानने वाली 'रामराज्य परिषद्' जैसी भारतीय धर्मशास्त्रों एवं नीतिशास्त्रों से अनुप्राणित राजनीतिक संस्था को सबल बनाना चाहिए।

स्वतन्त्रता का अर्थ

स्वामी जी का यह मत रहा कि स्वतन्त्र विधान, स्वतन्त्र संस्कृति, स्वतन्त्र भाषा और अपनी स्वतन्त्र परम्परा के अनुसार सब काम होने

से ही देश की स्वतन्त्रता समझी जाती है। उनका कहना है कि 'अभ्युदय निःश्रेयस के अनुकूल स्वतन्त्रता ही स्वतन्त्रता है। इदि इसके प्रतिकूल कोई स्वतन्त्रता होती है तो वह उच्छृंखलता मानी जाती है। स्वतन्त्रता भी अन्ततः ईश्वर का ही रूप है। स्वतन्त्रता दो प्रकार की है। एक धार्मिक स्वतन्त्रता दूसरी आर्थिक स्वतन्त्रता।

१—धार्मिक स्वतन्त्रता :—धर्म के सम्बन्ध में राष्ट्र की पूर्ण स्वाधीनता आवश्यक है। धर्म पर कभी भी शासन का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। यदि शासन को हस्तक्षेप का अधिकार दिया गया तो धर्म की स्थिरता समाप्त हो जायेगी।

२—आर्थिक स्वतन्त्रता :—वैध धन की स्वतन्त्रता प्रत्येक राष्ट्र के लिये अनिवार्य है। शिक्षा एवं धर्म की स्वतन्त्रता धन की स्वतन्त्रता के बिना बेकार होती है। धन रहने पर ही यज्ञ, दान, मन्दिर निर्माण भोग, राग, शिक्षा, संचालन तथा लोकतंत्र का सफल संचालन सम्भव हैं।

जातिवाद

प्राचीन भारतीय राजनीति के मर्मज्ञ तथा भारतीय संस्कृति, परम्परा, वर्णव्यवस्था, जातीयता तथा शास्त्रीयता के परम पोषक होने के कारण स्वामी जी जातिवाद के प्रबल समर्थक हैं। परन्तु उनका जातिवाद किसी प्रकार के पूर्वाग्रह से युक्त नहीं है। वे जातिवाद की समस्या को शुद्ध शास्त्रीय सन्दर्भ में देखते हैं। भारतीय संस्कृति की करोड़ों वर्ष की परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये जातिवाद का समर्थन आवश्यक है। जातिवाद व्यक्ति की परम्परा का निर्मल इतिहास है।

स्वामी जी के राजनीतिक दर्शन का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि वे एक ऐसे शास्त्र तथा धर्म नियंत्रित राज्य की स्थापना करना चाहते

है जिससे भारतीय समाज अपने आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों के सन्दर्भ में अत्यन्त ऊंचा स्थान पा सके। आधुनिक जीवन की प्राप्ति के बिना मानवता के शाश्वत सिद्धान्तों की रक्षा कभी भी नहीं हो सकती।

शासन और महात्मा

देश की अखण्डता, शासक की ईश्वर परायणता एवं धर्म निष्ठा, शासन का स्थायित्व, प्राचीन भारतीय ढंग पर ग्राम पंचायतों का स्थापना एवं निरीक्षण, वस्तु विनिमय, तथा राजा की उदारता, विद्वता, शुद्धता इत्यादि गुणों को स्वामी जी धर्म नियन्त्रित राज्य के लिये अनिवार्य मानते हैं। उनका यह निश्चित मत है कि विद्वानों, महात्माओं, साधुओं एवं सन्तों को शासनारूढ़ शासक की भूल या अपवाद को रोकने के लिए परम निरपेक्ष होने पर भी लोक कल्याण की कामना से राजनीति में सक्रिय हस्तक्षेप करना चाहिये।

पूज्य स्वामी जी महाराज कौटिल्य के बाद सर्वोत्कृष्ट राजनीतिक दार्शनिक तथा मौलिक विचारक के रूप में दिखालायी पड़ते हैं। आधुनिक राजनीतिक दर्शन को उनका सबसे बड़ा योगदान आध्यात्मिक अहिंसा का सिद्धांत रहा है। आधुनिक युग में सब कुछ प्राप्त कर भी मनुष्य अपने आप में एक विचित्र रिक्तता का अनुभव कर रहा है। आध्यात्मिकता की कमी के कारण मन की निर्मलता नहीं हो पा रही है। फलतः मनुष्य रागद्वेष, घृणा, क्रोध, अत्याचार, अनाचार वैमनस्य तथा युद्ध जैसी तामसी प्रवृत्तियों का शिकार होता जा रहा है। स्वामी जी धर्म नियन्त्रित राज्य के माध्यम से आध्यात्मिक घनीभूतता द्वारा इस रिक्तता को भरना चाहते हैं। उनके इस सिद्धांत में मानव की बुरी प्रवृत्तियों को अच्छी प्रवृत्तियों द्वारा जीतने का प्रयास किया जाता है। आध्यात्मिक घनीभूतता से ऐसे वातावरण का निर्माण सम्भव हो

सकेगा जिसमें क्रोध को अक्रोध से, असत्य को सत्य से, पाप को तप से तथा अन्य बुरी प्रवृत्तियों को अच्छी प्रवृत्तियों से जीत कर समाज के नवनिर्माण का प्रयास हो सके। सात्त्विक भावों की सुरभि सर्वत्र छिड़क कर भ्रातृत्व की भावना का विकास करे तथा कलह, विद्वेष मिटा कर मानवता को नया आयाम दे सके। यह स्पष्ट है कि जब तक उसके इस आध्यात्मिक अहिंसा के सिद्धांत को पूर्ण रूपेण कार्य रूप में परिणत नहीं किया जायेगा तब तक मानवता के सिर पर विनाश का खतरा मंडराता रहेगा। मानव-मानव की दूरी बढ़ती रहेगी। राजनीति को वे विष्णु की पालिनी शक्ति मानते हैं। अतः वह निर्वाण प्रधान न होकर निर्माण प्रधान होनी चाहिए।

आज की आवश्यकता

आज की सबसे बड़ी आवश्यकता समाज के निर्माण की है जिसमें लोकतन्त्र के सर्जनात्मक पहलू पर ध्यान देकर मानव के सद्गुणों को ऊँचा उठाया जाय। पूज्य स्वामी जी महाराज के राजनीतिक दर्शन में वे सभी विशेषतायें विद्यमान हैं, जिनका अनुगमन कर सद्गुणों की प्राप्ति की जा सकती है। आवश्यकता मात्र उन्हें जन-जन तक प्रचारित करने की है। युग परिवर्तित हो रहा है। समाज धीरे-धीरे पुनः पीछे की ओर लौटने लगा है। बाहरी रूप में नास्तिकता का दिखावा करने के साथ मनुष्य भीतरी तौर पर अपने को अस्तिवाद तथा आस्तिकता से जोड़ने के लिये छटपटा रहा है। उसे एक सेतु की आवश्यकता है। स्वामी जी महाराज का राजनीतिक दर्शन ही उस सेतु की भूमिका निभाने में समर्थ है।

सर्ववेद शाखा सम्मेलन :

कुछ लोग वेद के कुछ भाग को वेद नहीं मानते उनके तर्कों पर र विचार के लिए श्री स्वामी जी महाराज ने तय किया कि दोनों

की जितनी शाखाएं उपलब्ध हैं उन सबका सम्मेलन बुलाया जाय। सर्ववेद शाखा सम्मेलन नाम से उसका पहला सम्मेलन कानपुर में हुआ इन सम्मेलनों में देश के विभिन्न भागों से वैदिक विद्वानों को बुलाया गया तथा आर्य समाजी विद्वानों को भी बुलाया गया। यह सर्ववेद शाखा सम्मेलन अनेक स्थानों पर हुआ और होता है।

भविष्य वाणियाँ

श्री स्वामी जी कभी-कभी कुछ कह दिया करते थे जो अब उनकी भविष्यवाणी के रूप में देखा जाता है।

१—भारतीय संविधान को उच्छिष्टसारसंग्रह की संज्ञा दी, जो आज सरकार भी वैसा ही कह रही है उसे बदल भी रही है।

२—गोहत्या पर प्रतिबन्ध न लगा तो कुछ दिन में गौओं का आयात करना पड़ेगा। आज लगभग आधे लाख गौवों का बाहर से आयात किया जा रहा है और गोबध बन्द करने पर भी विचार हो रहा है।

३—राजाओं से लेकर गरीबों तक को सम्बोधित करते हुए कहा था कि अभी जो मैं कह रहा हूं, समझ में नहीं आ रहा है, किन्तु जब तुम्हारी समझ में आयेगा, तब मार्गदर्शक ही न मिलेगा।

४—शास्त्र तदनुसारी मन्दिर की मर्यादा बचाने से ही कल्याण अन्यथा कुछ दिन मौज मस्ती कर लो अन्त में सब कुछ छोड़ना ही पड़ेगा।

वेदभाष्य :

श्री स्वामी जी महाराज आजकल वेद भाष्य निर्माण कर रहे हैं। पहले आध्वर्यव प्रयोग चल रहा है। कुछ आधुनिक लोगों ने श्रुतियों एवं सूत्रों के अनुसार किये गये प्राचीन भाष्यों में दूषण

छिपाकर नये-नये अर्थ किये हैं। अपने भाष्य में श्री स्वामी जी महाराज ने इन नये भाष्यों का खण्डन कर प्राचीन प्रामाणिक भाष्यों का युक्तियुक्त समर्थन किया है।

पूज्य स्वामी जी का साहित्य

१. भगवत्तत्व—इस ग्रन्थ में भगवान् श्री कृष्णचन्द्र द्वारा रासलीला की उत्कृष्टता का वर्णन तथा रासलीला सम्बन्धी अनेक विवादास्पद विषयों का युक्तिपूर्ण शास्त्रीय सिद्धान्तनुसार श्रीमद्भागवत् का विवेचन है। इस ग्रन्थ में दस लेखों का संग्रह है। १—वेदान्तसार २—निर्गुण या सगुण ३—श्री कृष्णजन्म और बालक्रीड़ा ४—व्रज भूमि ५—श्री रासलीला रहस्य ६—भगवान् का मंगलमय स्वरूप ७—श्री रामभद्र का ध्यान ८—गणपतिमहात्म्य ९—इष्टदेव की उपासना १०—सर्व सिद्धान्त समन्वय। पृष्ठ सं० ७३०।

२. वर्णाश्रम-धर्म और संकीर्तन मीमांसा—अपने नाम के अनुसार ही मर्यादा रक्षण एवं संकीर्तन आदि में वर्णाश्रम धर्म की उपयोगिता तथा आवश्यकता पर प्रकाशात्मक विवेचन है। सम्प्रति इसका प्रथम संस्करण समाप्त हो जाने से श्रद्धालु भक्तों को दुष्प्राप्य है। शीघ्र ही दूसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है।

३. वेद का स्वरूप और प्रामाण्य—दो भागों में संस्कृत से अनभिज्ञ श्रद्धालु हिन्दी प्रेमी जनता को वेद के उच्चतम सिद्धान्तों एवं वेद के स्वरूप का सरल शब्दों में ज्ञान कराने वाला ग्रन्थ हैं।

४. मार्क्सवाद और रामराज्य—राजनीति का सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ पाश्चात्य राजनीति एवं पौरस्त्य राजनीति का तुलनात्मक विवेचन कार्ल मार्क्स के सम्पूर्ण सिद्धान्तों की अनुपयोगिता सिद्ध करने वाली भारतीय राजनीति का प्रबल पोषक ग्रन्थ।

५. अहमर्थ और परमार्थसार—भारतीय वेदान्त शास्त्रानुसार आत्मा का वास्तविक स्वरूप (अहंतत्त्व) का विवेचनात्मक अन्तर्मुखी साधकों के लिए सर्वोत्तम संग्रहणीय ग्रन्थ।

६. संघर्ष और शान्ति—साधारण हिन्दी प्रेमियों से लेकर उच्चतर विद्वानों के लिए लाभकारी २७ लेखों का अनुपम संग्रह है।

७. भक्तिरसार्णव—मूल मांत्र, विद्वनों के लिए एक अनूठा भक्तिपूर्ण ग्रन्थ। इसमें पूज्य स्वामी जी ने साहित्य के नौ रसों के अतिरिक्त रसो वै सः के आधार पर भक्ति को एक स्वतन्त्र रस माना है, जिसके बिना मानव जीवन व्यर्थ होता है।

८. वेद स्वरूप विमर्श—संस्कृत मूलमात्र। यह वेद के अपौरुषेयत्व आदि गहन तत्त्वों का शास्त्रार्थ परक ग्रन्थ है। इसमें वेद-विज्ञान सम्बन्धी लेखों तथा आर्य समाज के प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्द सम्प्रदाय के अनुयायियों के लेखों एवं वेद सम्बन्धी विचारों का युक्ति उक्ति, तर्क, प्रमाण की कसौटी पर सिद्धांत पक्ष का प्रतिपादन किया है।

९. चातुर्वर्ण्य-संस्कृति-विमर्श—यह भी संस्कृत भाषा का ग्रन्थ (प्रथमभाग) है। जाति सम्बन्धी विशद विवेचन विद्वानों के लिए प्रेरणाप्रद है। इसमें मुख्य रूप से छः विचारणीय विषयों पर महत्वपूर्ण प्रकाश डाला गया है, यथा १—जन्मना वर्णवाद २—वर्णद्वयवाद ३—एकवर्णवाद ४—आजिविका वर्णवाद ५—वर्णसम्बन्धी विचार ६—वेदाध्ययनाधिकारः। द्वितीय भाग यन्त्रस्थ है।

१०. राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और हिन्दू धर्म—इसमें पूज्य श्री स्वामी जी महाराज द्वारा भारतीय संस्कृति के प्रधान अंग धर्म

दर्शन, इतिहास, सदाचार, भाषा इन पाँच विभागों द्वारा भारतीय संस्कृति के प्रकाट्य शास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंचालक स्वर्गीय श्री गोलवलकर जी की पुस्तक 'विचार नवनीत' में प्रतिपादित हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में भ्रमात्मक विचारों का खण्डन कर अपौरुषेय शास्त्रीय सनातन धर्म के सिद्धान्तों की उपयोगिता सिद्ध की गयी है।

११. विचार पियूष—स्वामीजी महाराज के ग्रन्थों में यह अपनी विशिष्टता रखता है। इसमें भारतीय परम्परा मूलक वेद शास्त्र प्रतिपादित नैतिक, धार्मिक, सकल व्यवहारोपयोगी विचारों का प्रमाण्य की कसौटी पर कसा हुआ भारतीय जीवन को अमृत्व प्रदान करने वाला पीयूष ही विचार पियूष के रूप में प्रकट है—राजनीति के अध्येताओं के लिए यह एक अपूर्व संग्रहणीय ग्रन्थ है।

१२. भक्ति सुधा—यह ग्रन्थ तीन खण्डों में प्रकाशित है। हिन्दी भाषा में भक्ति रस के उच्चतम एवं मार्मिक विषयों का समावेश इस ग्रन्थ में है। पूज्य स्वामी जी महाराज ने इस ग्रन्थ में भक्ति परक विभिन्न विषयों पर प्रकाश डाला है।

१३. श्रीविद्यारत्नाकर—यह श्रीविद्या सम्बन्धी उपासना के लिए अब तक जितने ग्रन्थ प्राप्त हैं, उन सब ग्रन्थों का 'श्रीविद्यारत्नाकर' है। यह पूज्य श्री स्वामी जी महाराज की अनुपम देन है।

१४. विदेश यात्रा, शास्त्रीय पक्ष—इस पुस्तक में विदेश यात्रा सम्बन्धित शास्त्रीय वचनों के आधार पर सनातन परम्पराओं की रक्षा के लिए कर्तव्य कार्य का निरूपण कर पूज्य श्री स्वामी जी ने शास्त्र के प्रति दृढ़ निष्ठा का परिचय दिया है।

१५. **रामायण-मीमांसा**—रामायण की ऐतिहासिकता पर विभिन्न पाश्चात्य विद्वानों द्वारा भ्रमात्मक शंकाओं का शास्त्रीय समीक्षात्मक अपूर्व ग्रन्थ है जो यन्त्रस्थ है।

१६. पूंजीवाद समाजवाद एवं रामराज्य :

यह पुस्तक रजनीश द्वारा लिखित 'समाजवाद से सावधान' पुस्तक के पूरक के रूप में लिखी गई है और यह सिद्ध किया गया है कि रजनीश ने समाजवाद को बिना समझे ही उसका खण्डन किया है अतः हेय है। इन वादों का स्वरूप और गुण दोष समझने के लिए यह ग्रन्थ पढ़ना आवश्यक है।

अन्य ग्रन्थ—रामराज्य परिषद की नीति से सम्बन्धित विभिन्न विषयों पर स्वामी जी ने कुछ लघु पुस्तिकाए लिखी हैं। जैसे—

रामराज्य परिषद् और अन्य दल।
आधुनिक राजनीति और रामराज्य परिषद्।
गम्भीर विचार की आवश्यकता।
ये राजनीतिक दल।
स्वतन्त्र पार्टी और रामराज्य परिषद्।
राजनीति में भी ईमानदारी।
धर्म और राजनीति।
गोवंश और उसकी समस्यायें।
क्या संभोग से समाधि।

आदि विभिन्न पुस्तकों में पूज्य श्री स्वामी जी महाराज ने भारतीय परम्परा प्राप्त शुक्र, बृहस्पति, कौटिल्य, कामन्दक आदि की नीतियों का वर्णन कर भारत में रामराज्य की सुखद संस्थापना पर जोर दिया है।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त पूज्य श्री स्वामी जी महाराज वेद सम्बन्धी पाश्चात्य विद्वानों के भ्रमात्मक दोषों के परिहारार्थ एक बृहद ग्रन्थ वेद भाष्य लिख रहे हैं।

श्री गोलवलकर की कोई पुस्तक श्री स्वामी जी की दृष्टि में आयी और उन्होंने एक छोटी सी पुस्तक जाति, राष्ट्र और संस्कृति लिखकर गोलबलकर जी के सिद्धान्तों की समालोचना की।

फिर कुछ दिनो के बाद 'विचार नवनीत' नामक उनकी पुस्तक सामने आयी और श्री स्वामी जी महाराज ने 'विचार पीयूष' लिख कर उसकी समालोचना की है। क्योंकि विचार नवनीत में हिन्दू धर्म एवं संस्कृति की गलत, शास्त्र विरुद्ध व्याख्या की गयी है।

पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की सर्वतोमुखी प्रतिमा का जाज्वल्यमान आदर्श आज सबके सामने है। वे यथावसर सभी धर्म विरुद्ध संघटनों की समालोचना करते हैं।

मार्क्सवाद और रामराज्य जैसा पौरस्त्य पाश्चात्य सभी नीतियों को सही रूप में उपस्थित कर पौरस्त्य (भारतीय) नीति का समर्थन करने वाला आकर ग्रन्थ लिख कर स्वामी जी महाराज ने अद्भुत प्रतिमा का दिग्दर्शन कराया है। यदि इस ग्रन्थ का अंग्रेजी में अनुवाद होकर वर्तमान नीति निर्देशकों के हाथ में जाय तब समग्र विश्व ही श्री स्वामी जी महाराज का उदार वैशिष्ट्य समझ सकेगा।

पूज्यचरणों के लोक कल्याणकारी जीवन की कतिपय झाँकियों को प्रस्तुत करने का एक लघु प्रयास किया गया है। लगभग ६० वर्षों तक देश के धार्मिक, आध्यात्मिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा नैतिक उत्थान में रत रहने वाले इस महामनीषी के कार्य के दौरान अनेक घटनाएं घटी हैं, देश के जीवन में अनेक उथल पुथल हुए हैं। काशी की गंगा की धारा में भी अनेक उतार चढ़ाव दिखायी पड़े हैं। इन सभी

स्थितियों में भी अपने सिद्धान्तों की रक्षा के लिए किये जाने वाले प्रयासों में किसी प्रकार की उथल-पुथल की बात उन्होंने नहीं आने दी है वे एक महान राजनेता तथा महान योगी हैं। उनके व्यक्तित्व में तटस्थ तथा तादात्म्य जैसी दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का अद्भुत सम्मिश्रण मिलता है। सामाजिक उत्थान के कार्य को आगे बढ़ाने के समय समाज के विभिन्न वर्गों से तादात्म्य स्थापित कर उन्होंने सामाजिक जीवन को नया दर्शन तथा नया आयाम दिया है।

इस दौरान अनेक व्यक्ति उनके सम्पर्क में आये; सांसारिक स्वार्थों की पूर्ति कर उनसे अलग भी हो गये, परन्तु इन घटनाओं की कोई प्रतिक्रिया उनके व्यक्तित्व में दिखाई नहीं पड़ी। सांसारिक कल्याण कार्य करने के पश्चात् सांसारिक झमेलों से दूर एक तटस्थ योगी का जीवन व्यतीत करने लग जाना उनके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता है। सांसारिक लोगों के बीच रहकर, उनसे विविध कार्यों में सहायता लेने के पश्चात् मानव सम्बन्धों की प्रक्रिया में वे किस सम्बन्ध-स्थापना को वरीयता देते हैं, एक अत्यन्त आत्मीय व्यक्ति द्वारा ऐसा प्रश्न उपस्थित कर देने पर पूज्य चरणों ने जो कहा था—

अस्मानवेहि कलमानलमाहतानाम्,
येषां प्रचण्डमुसलैरवदाततैव।
ये स्तोकपीडनवशात् खलतां प्रयान्ति,
स्नेहं विसृज्य सहसा न वयं तिलास्ते॥"

अर्थात् हमें वह धान समझे, जो विताड़ितों में सर्वाधिक विताड़ित है, और जिनके ऊपर जितनी ही मुसलों की प्रचण्ड चोट पड़ती है, उतनी ही उनकी स्वच्छता निखरती है, जो थोड़ी पीड़ा से ही सहसा स्नेह छोड़कर खल बन जाते हैं हम वे तिल नहीं हैं।

पूज्य चरणों की दैनिक दिनचर्या ही उनके असाधारण व्यक्तित्व की परिचायक है। उनमें अद्‌भुत सहिष्णुता है। विविध शल्प क्रियाओं तथा शारीरिक कष्टों के समय देश के सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति, चिकित्सकों तथा कार्यकर्त्ताओं ने इस सम्बन्ध में उन्हें अपने प्रकार का एक ही व्यक्ति माना है। आज भी जब वे ७० वर्ष के हो चुके हैं, प्रतिदिन कई मील पैदल चलना, रात्रि के ड़ेढ़ वजे ही उठकर पूजन आसन पर बैठ जाना. घंटों वेद भाष्य लिखते रहना, पूजन त्रिकाल नियमों का पालन करना, एक समय सायं ५ बजे सामान्य भिक्षा कर लेना; भयंकर शारीरिक कष्टों के समय भी व्रतों, उपवासों के नियमों को भंग न करना और कष्ट एवं पीड़ा को हंसते-हंसते पी जाना, उनके लोकोत्तर व्यक्तित्व के परिचायक नहीं हैं ? लोक कल्याण के महान पथ पर पूज्यचरण अनवरत यात्रा करते हुए चिरकाल तक भारतीय समाज का मार्गदर्शन करते रहें, हम उनके मार्ग का अनुसरण करके कल्याण प्राप्त करें, भगवान् विश्वनाथ एवं मां अन्नपूर्णा से यही प्रार्थना है।

સપ્તશીતિર્મહાતેજાઃ પઞ્ચાબ્દઘ્ન સનાતનઃ।
જયતાજ્જ્ઞાનનીનાથો વેદવેદ્યો મહામતિઃ॥
નારાયણાભિધગુરો ભગવન્નમસ્તે

जय धर्मसम्राट्

स्वामीति महातेजाः
परब्रह्म सनातनः।
जयताऽज्ञानकीनाशो
वेदवेद्यो महामतिः॥
आचार्यं सर्वशास्त्राणां
पवित्राणां विभूषणम्।
संस्तुवे धर्मसम्राटं
करपात्रं जगद्गुरुम्॥

सेवा में :-

बृज लता कपूर